समाज की प्रमुख विशेषताएं:

समाज और उसकी प्रकृति को स्पष्टतः समझने के लिए उसकी कुछ प्रमुख विशेषताओं का वर्णन किया गया है जो सभी समाजों में सार्वभौमिक रूप से पायी जाती हैं। ये विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. **पारस्परिक जागरूकता**– पारस्परिक जागरूकता के अभाव में न तो सामाजिक संबंध बन सकते हैं और न ही समाज। जब तक लोग एक–दूसरे की उपस्थिति से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से परिचित नहीं होंगे, तब तक उनमें जागरूकता नहीं पायी जा सकती और अन्तःक्रिया भी नहीं हो सकती। इस जागरूकता के अभाव में वे न तो एक–दूसरे से प्रभावित होंगे और न ही प्रभावित करेंगे अर्थात् उनमें अन्तःक्रिया नहीं होगी। अतः स्पष्ट है कि सामाजिक संबंधों के लिए पारस्परिक जागरूकता का होना आवश्यक है और इस जागरूकता के आधार पर निर्मित होने वाले सामाजिक संबंधों की जटिल व्यवस्था को ही समाज कहा गया है।
2. **समाज अमूर्त्त है**– समाज व्यक्तियों का समूह न होकर उनमें पनपने वाले सामाजिक संबंधों का जाल है। समाजिक संबंध अमूर्त्त है। इन्हें न तो देखा और न ही छुआ जा सकता है। इन्हें तो केवल अनुभव किया जा सकता है। अतः सामाजिक संबंधों के आधार पर निर्मित समाज भी अमूर्त्त है। यह तो अमूर्त्त समाजिक संबंधों की जटिल व्यवस्था है।
3. **समाज में समानता एवं असमानता**– समाज में समानता एवं असमानता दोनों ही देखने को मिलती है। ये दोनों ही समाज के लिए आवश्यक तत्व है। दोनों का अपना – अपना महत्व है और ये एक–दूसरे के पूरक हैं। न तो किसी ऐसे समाज की कल्पना की जा सकती है जिसमें पूर्णतः समानता हो और न ही किसी ऐसे समाज की जिसमें पूर्णतः असमानता हो। प्रत्येक समाज में ये दोनों ही बातें अनिवार्यतः पायी जाती है। यहां दोनो को समझाया गया है–

   (क) समाज में समानता – जब तक लोगों में किसी न किसी मात्रा में समानता की भावना नहीं होगी, तबतक उनका एक–दूसरे से संबंधित होने या इकट्ठा रहने का प्रश्न ही नहीं उठता । ऐसी स्थिति में समाज का निर्माण भी नहीं हो सकता। जो लोग कुछ मात्रा में शरीर और मस्तिष्क की दृष्टि से समान हैं तथा जो एक–दूसरे के निकट हैं, उन्हीं में समाज पाया जाता है। 'एक विश्व' का सिद्धांत प्रमुखतः सम्पूर्ण मानव प्रजाति की समानता पर ही आधारित है।

   (ख) समाज में असमानता– समाज में समानता के साथ–साथ भिन्नता भी पायी जाती है। लिंग–भेद असमानता का एक उदाहरण है और इसी भेद के कारण प्रजनन या सन्तानोत्पत्ति संभव हो पायी। समाज में असमानताओं के पाये जाने के कारण ही प्रत्येक एक–दूसरे से कुछ लेता और बदले में कुछ देता है। यह बात परिवार, मित्रमण्डली, समूह, समिति, समुदाय सभी में पायी जाती है।

   (ग) समाज में असमानता समानता के अधीन है– समाज में श्रम–विभाजन में पहले सहयोग है फिर विभाजन। जिसका तात्पर्य यही है कि समान उद्देश्यों की पूर्ति के लिए लोग एक–दूसरे के साथ सहयोग करते हैं परंतु उद्देश्यों को प्रभावपूर्ण ढंग से प्राप्त करने के लिए वे आपस में कार्यों को बांट (विभाजन) लेते हैं। समान आवश्यकताओं के कारण ही असमान कार्यों को पूरा करने के लिए इकट्ठे होकर एक–दूसरे को सहयोग करते हैं। उदाहरण के रूप में, कुछ व्यापारी लाभ कमाने के उद्देश्य से साझेदारी के संबंधों में बंध जाते हैं और मिलकर व्यापार करते हैं। इनमें से प्रत्येक, उद्देश्य की सफलता के लिए व्यापार से संबंधित विभिन्न कार्य अपनी योग्यता और शक्ति के अनुसार आपस में बांट लेते हैं।
4. **समाज में सहयोग या संघर्ष**– समाज में दो प्रकार की शक्तियां देखने को मिलती हैं: प्रथम, वे शक्तियां जो मनुष्यों को एकता के सूत्र में बांधती हैं, और द्वितीय, वे शक्तियां जो मनुष्यों को एक–दूसरे से पृथक् करती हैं। सहयोग प्रथम और संघर्ष द्वितीय के अन्तर्गत आता है। ये दोनों तत्व या विशेषताएं समाज के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। प्रत्येक समाज में सहयोग और संघर्ष सार्वभौमिक प्रक्रिया के रूप में पाये जाते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि सरल या आदिम समाज से लेकर आधुनिक जटिल समाज तक में सहयोग और संघर्ष चलता रहता है। मनुष्य और समूहों को अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए एक–दूसरे के साथ सहयोग करना पड़ता है। लेकिन जहां वे सहयोग से ऐसा नहीं कर पाते, वहां संघर्ष का सहारा भी लेते हैं।

   (क) सहयोग– प्रत्येक कार्य या उद्देश्य में सफलता का आधार सहयोग ही है। सहयोग दो प्रकार के होते हैं– **(1) प्रत्यक्ष सहयोग** तथा **(2) अप्रत्यक्ष सहयोग**। **प्रत्यक्ष सहयोग**, सहयोग का वह प्रकार है जहां समान उद्देश्य की पूर्ति के लिए कुछ लोग आमने–सामने के संबंधों में बंधकर समान कार्य करते हैं। खेल के मैदान में खिलाड़ियों द्वारा एक–दूसरे का सहयोग करना, परिवार में एक–दूसरे की आवश्यकताओं की पूर्ति में योग देना प्रत्यक्ष सहयोग का ही उदाहरण है। **अप्रत्यक्ष सहयोग**, सहयोग का वह प्रकार है जहां समान उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कुछ लोग असमान कार्य करते हैं यहां उद्देश्य तो समान होता है परन्तु कार्य भिन्न–भिन्न होते हैं। श्रम–विभाजन अप्रत्यक्ष सहयोग का ही उदाहरण है।

   (ख) संघर्ष– समाज में सहयोग के साथ–साथ संघर्ष भी देखने को मिलता है। संघर्ष का प्रमुख कारण कुछ शारीरिक या वैयक्तिक भिन्नताएं, सांस्कृति भिन्नताएं, विरोधी स्वार्थ या स्वार्थों का टकराना एवं तीव्र गति से होने वाले समाजिक परिवर्तन है।ये विभिन्न प्रकार की भिन्नताएं, स्वार्थ एवं सामाजिक परिवर्तन संघर्ष के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी हैं। मानव समाज में सहयोंग के समान संघर्ष भी मानव सभ्यता के विकास के प्रत्येक स्तर पर देखने को मिलता है।

   संघर्ष के दो प्रकार हैं: **(1) प्रत्यक्ष संघर्ष तथा (2) अप्रत्यक्ष संघर्ष**। प्रत्यक्ष संघर्ष में व्यक्ति या समूह आमने–सामने होते हैं। यहां वे प्रत्यक्ष संपर्क में रहते हुए संघर्ष करते हैं। **प्रत्यक्ष संघर्ष**, वह संघर्ष है जहां व्यक्ति या समूह अपनी आवश्यकता, स्वार्थ या उद्देश्य की पूर्ति के लिए मार–पीट, हिंसा या लड़ाई–झगड़े का सहारा लेता है। दो सेनाओं के बीच युद्ध, साम्प्रदायिक या अन्य प्रकार के दंगे, दो विद्यार्थी–समूहों या राजनीतिक दल के सदस्यों के बीच मार–पीट प्रत्यक्ष संघर्ष के ही उदाहरण हैं। **अप्रत्यक्ष संघर्ष**– संघर्ष का वह प्रकार है जिसमें व्यक्ति या समूह अपने स्वार्थ या उद्देश्य की पूर्ति के लिए दूसरे को हानि पहुंचाता है या उसके मार्ग में बाधा डालता है। विभिन्न राष्ट्रों के बीच चलने वाला शीत–युद्ध अप्रत्यक्ष संघर्ष का ही उदाहरण है।

प्रत्येक समाज में सहयोग के समान संघर्ष की सार्वभौमिक प्रक्रिया के रूप में सदैव पाया जाता रहा है। यह कहा जाता है कि जहां समाज है, वहां संघर्ष भी है। संघर्ष कई बार अन्याय, अत्याचार एवं शोषण को समाप्त करने में मदद देता है। लेकिन समाज में संघर्ष के बजाय सहयोग का महत्व अधिक है। आज तक का इतिहास बताता है कि मानव ने जितना समय संघर्ष में बिताया, उससे कहीं अधिक समय सहयोग एवं शांति में बिताया है। हम यह कह सकते हैं कि संघर्ष सहयोग के अधीन है। विभिन्न मनुष्यों एवं समूहों में साधारणतः सहयोग अधिक एवं संघर्ष कम पाया जाता है। परंतु ये दोनों प्रत्येक समाज में मौजूद अवश्य रहते

हैं । इसी कारण कहा गया है कि समाज संघर्ष से कटा हुआ सहयोग है। जिस समाज में संघर्ष के बजाय सहयोग जितनी अधिक मात्रा में पाया जाता है, वह समाज उतना ही अधिक संगठित होता है।

5. **समाज अन्योन्याश्रितता पर आधारित**– अन्योन्याश्रितता समाज की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विशेषता है। अन्य शब्दों में यह कहा जाता है कि अन्योन्याश्रितता समाज की उत्पत्ति एवं विकास में एक आधारभूत तत्व है। वास्तव में यह मानव जीवन, सभ्यता एवं संस्कृति तथा उन्नति का प्रमुख आधार है। समाज सामाजिक संबंधों की जटिल व्यवस्था है और विभिन्न प्रकार के सामाजिक संबंध एक–दूसरे पर निर्भर हैं। मनुष्य को अपनी प्राणीशात्रीय या शारीरिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए दूसरों के साथ सामाजिक संबंध स्थापित करना और उनपर निर्भर रहना पड़ता है। आदिम से आदिम और छोटे एवं सरल से सरल प्रकार के समाजों में भी व्यक्ति को यौन–संतुष्टि, शिकार एवं जीवन रक्षा के लिए दूसरों पर निर्भर रहना पड़ा है। आधुनिक जटिल समाजों में तो श्रम–विभाजन के बढ़ने से मनुष्यों और साथ ही समाज के विभिन्न अंगों की एक – दूसरे पर निर्भरता बढ़ गई है।

6. **समाज सदैव परिवर्तनशील एवं जटिल व्यवस्था है**– समाज की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता इसकी सदैव परिवर्तनशील प्रकृति है। सामाजिक परिवर्तन एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है। विभिन्न कारणों से सामाजिक संबंधों में परिवर्तन आता रहता है, व्यक्तियों की प्रस्थितियां एवं भूमिकाएं बदलती रहती हैं, पारस्परिक अपेक्षाओं में भी समय के साथ बदलाव आता रहता है। इन सबके परिणामस्वरूप समाज बदलता है, समाज की सामाजिक संरचना में परिवर्तन आता है। कोई भी समाज आज ठीक वैसा समाज नहीं है जैसा वह एक हजार वर्ष पहले था या एक हजार वर्ष पश्चात् होगा। भारत का वैदिक कालीन समाज आधुनिक समय के जटिल औद्योगिक समाज से काफी भिन्न था। स्पष्ट है कि समाज सदैव परिवर्तनशील है।

   साथ ही समाज एक जटिल व्यवस्था है जो अनेक प्रकार से सामाजिक संबंधों से निर्मित या गुंथी हुई है। एक ही व्यक्ति सैकड़ों व्यक्तियों से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से संबंधित होता है। संबंध के आधार पर ही उसकी प्रस्थिति एवं भूमिका निर्धारित होती है। साथ ही व्यक्ति अन्य व्यक्तियों की अपेक्षाओं को ध्यान में रखकर व्यवहार करता है। जब एक व्यक्ति अनेक प्रकार के सामाजिक संबंधों में बंधा होता है और निश्चित तरीके से एक–दूसरे के साथ संबंधों एव अपेक्षाओं को ध्यान में रखकर व्यवहार करता है तो लाखों करोड़ों व्यक्तियों के सामाजिक संबंधों, उनकी प्रस्थितियों एवं भूमिकाओं और पारस्परिक अपेक्षाओं के आधार पर निर्मित होने वाली व्यवस्था निश्चित रूप से जटिल होगी। इसमें किसी प्रकार का कोई संदेह नहीं है। अतः समाज न केवल सदैव परिवर्तनशील है बल्कि साथ ही सामाजिक संबंधों की एक जटिल व्यवस्था है।

7. **समाज मनुष्यों तक ही सीमित नहीं है**– समाज केवल मनुष्यों तक ही सीमित न होकर पशुओं में भी पाए जाते हैं। मैकाईवर एवं पेज ने ठीक ही कहा है कि ''जहां कहीं जीवन है, वहीं समाज है''। इसका तात्पर्य यही है कि सभी जीवधारियों के अपने–अपने समाज होते हैं। चींटियों तथा मधुमक्खियों के भी समाज होते हैं। इनमें एवं अनेक अन्य पशु–पक्षियों में सामाजिक जीवन की अनेक विशेषताएं देखने को मिलती है। इतना अवश्य है कि जीवन के निम्नतम स्तर वाले जीवधारियों में सामाजिक जागरूकता बहुत ही कम और सामाजिक सम्पर्क बहुत ही अल्पकालीन होता है। जहां सामाजिक या पारस्परिक जागरूकता का अभाव है वहां समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती। उच्च स्तर के पशुओं, जैसे हाथी, गाय तथा नर–वानरों के निश्चित समाज होते हैं। इनके जीवन में पारस्परिकता और सहयोग के तत्व पाए जाते हैं। समाजशास्त्र के अन्तर्गत हम पशु समाज का अध्ययन न करके हम मानव समाज का अध्ययन करते हैं। इसका कारण है कि अन्य पशुओं की तुलना में मानव विकास के उच्चतम स्तर पर है और वही अपनी योग्यता, क्षमता, गुणों एवं शारीरिक विशेषताओं के कारण संस्कृति का निर्माता है। उसका अपना समाज, सामाजिक संगठन और सामाजिक व्यवस्था है। अतः हम मानव समाज के अध्ययन तक ही अपने को सीमित रखते हैं।